LL.B.-1st Sem. Paper -6th law of Crime-1

Question 1:- **अपराध को परिभाषित कीजिए। अपराध के आवश्यक तत्वों की विवेचना कीजिए।**

Answer:- अपराध की परिभाषा– 'अपराध विधि द्वारा दण्डनीय कार्य है क्योंकि यह अधिनियम द्वारा निषिद्ध है या लोकहित के लिये हानिकारक है।' यह परिभाषा बहुत विस्तृत है, क्योंकि ऐसी कोई भी चीज जो लोकहित के लिये हानिकारक है अपराध हो सकती है। आधुनिक जटिल समाज में बहुत सी ऐसी चीजें हैं जो लोकहित के लिये हानिकारक कहीं जा सकती हैं।

बेन्थम के अनुसार – अपराध वह है जिन्हें विधानांग ने अच्छे या बुरे कारणों से निषिद्ध कर दिया है। यदि उपयोगिता के नियमों के अनुसार सर्वश्रेष्ठ सम्भावित विधि के अन्वेषण के लिये प्रश्न सैद्धान्तिक शोध से सम्बन्धित है तब ऐसे कार्यो को जो किसी बुराई के कारण अथवा उसे उत्पन्न करने की सम्भावना के कारण निषिद्ध किये जाने चाहिये, हम अपराध की संज्ञा दे सकते है।

ब्लैकस्टन ने अपनी पुस्तक' 'कमेन्ट्रीज ऑन दी लॉज आफ इंग्लैण्ड' में अपराध को ' निषिद्ध या समादेशित करने वाली सार्वजनिक विधि के अतिक्रमण के रूप में किया गया कार्य या लोप अपराध कहलाता है।

अपराध के तत्व– अपराध के निम्नलिखित प्रमुख तत्व हैं–

1. एक मानव जिसे एक विशिष्ट ढ़ग से वैधिक बाध्यता के अधीन कार्य करना है तथा जो दण्ड आरोपित करने के लिये उपयुक्त विषय है,
2. ऐसे मानव के मन में एक दुराशय है।
3. ऐसे आशय को पूरा करने लिये किया गया कोई कार्य और
4. ऐसे कार्य द्वारा किसी दूसरे मानव या सम्पूर्ण समाज को एक क्षति।

मानव– किसी कार्य को अपराध के रूप में विधि द्वारा दण्डनीय होने के लिये किसी मानव द्वारा किया जाना चाहिये। प्राचीन वैधिक संस्थाओं में क्षति के लिये पशुओं या निर्जीव पदार्थो को दण्ड दिये जाने के हमें पर्याप्त उदाहरण मिलते है।

दुराशय – 'मात्र कार्य किसी को अपराधी नहीं बनाता यदि उसका मन अपराधी न हो।' यह है कि कार्य स्वयं किसी को दोषी नहीं बनाता जब तक कि उसका आशय वैसा न रहा हो।

आपराधिक कृत्य – किसी अपराध के लिए एक व्यक्ति तथा उसका दुराशय ही पर्याप्त नही है क्योंकि किसी मनुष्य के आशय को हम नहीं जान सकते। किसी व्यक्ति के विचार विचारणीय नहीं है।

मानव की क्षति– भारतीय दण्ड संहिता की धारा 44 द्वारा परिभाषित क्षति शब्द किसी इस प्रकार की हानि की घोतक है, जो किसी व्यक्ति के शरीर, मन, ख्याति या सम्पत्ति को अवैध रूप से कारित हुई हो।

Question 2: "यह कहा जाता हैं कि सम्पूर्ण आपराधिक विधि के क्षेत्र में दुराशय से अधिक महत्वपूर्ण और कोई सिद्वान्त नहीं है " व्याख्या कीजिए एवं विवेचना कीजिए कि किस सीमा तक इस सिद्धान्त को भारतीय दण्ड संहिता में लागू किया गया है?

Answer :- दुराशय – 'मात्र कार्य किसी को अपराधी नहीं बनाता यदि उसका मन अपराधी न हो।' यह है कि कार्य स्वयं किसी को दोषी नहीं बनाता जब तक कि उसका आशय वैसा न रहा हो। ' दुराशय या आपराधिक आशय का सिद्धान्त अंग्रेजी सूत्र " Actus Non facit Reum nisi Mens Sit Rea"

इस उक्ति से एक दूसरी उक्ति निकलती है ' मेरे द्वारा, मेरी इच्छा के विरूद्ध किया गया कार्य को दण्डनीय होने के लिए इच्छित होना चाहिए या स्वेच्छा से किया गया कार्य आपराधिक आशय से किया गया होना चाहिये। अतः अपराध को गठित करने के लिये आशय एवं कार्य दोनों संगामी होना आवश्यक है। जहॉ किसी अपराध को गठित करने के लिए आवश्यक आपराधिक आशय अनुपस्थित होता है वहॉ अभियुक्त दण्डित नहीं किया जा सकता जब तक कि कृत्य दोष कर्ता के आशय के बिना भी विवक्षित या स्पष्ट रूप से दण्डनीय न हों।

विश्प ने अपनी पुस्तक क्रिमिनल ला में दुराशय का अर्थ यह बताया है कि ' बिना दुराशय के चाहे कार्य छोटा हो या बड़ा अपराध नहीं हो सकता। भारतीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्टेट आफ महाराष्ट्र v. मेयर हंस जार्ज, AIR 1965 SC 722-731 के वाद में दुराशय के बारे में यह अभिव्यक्त किया है कि केवल कार्य किसी को अपराधी नहीं बनाता जब तक उसका मन भी अपराधी न हों।

आंग्ल विधि का आरम्भ कठोर दायित्व या पूर्ण दायित्व के सिद्धान्त के साथ हुआ है। लगभग प्रत्येक प्रकरण में ऐसा माना जाना चाहिए कि जिस कार्य को व्यक्ति ने किया है उसको करने का उसका आशय था । कि उन दिनों अपराध तथा अपकृत्य के बीच अन्तर सुस्पष्ट नहीं था और दण्ड अपकारित व्यक्ति को

प्रतिकर स्वरूप दिये गये धन के रूप में होता था। अतः विरोधी की मनःस्थिति लगभग नगण्य वस्तु थी। परन्तु वाद में जब उपयुक्त प्रकरणों में शारीरिक दण्ड को आर्थिक दण्ड का स्थान दे दिया गया तभी से कृत्य के पीछे आपराधिक आशय को भी महत्व मिला। अब अपराध के आवश्यक तत्व के रूप में दुराशय का प्रमुख स्थान है। इसकी हम विस्तृत चर्चा दुराशय के भाग में करेंगें।

भारतीय दण्ड संहिता में दुराशय का सिद्धान्त के स्थान–

दुराशय या आपराधिक मनः स्थित अपराध का आवश्यक तत्व है। दुराशय की अवधारण को सांविधिक अपराधों में न्यायाधीशों ने निर्वचन के माध्यम से संसद की अनुमति के बिना शामिल किया था। **शेराज बनाम डी. रूटजेन के वाद** में न्यायाधीश राइट ने निर्णीत किया कि 'प्रत्येक अधिनियम में मनःस्थिति अन्तर्निहित है जब तक कि इसके प्रतिकूल न सिद्ध कर दिया जाए। 'वाद में इस मत को **महाराष्ट्र बनाम एम.एम. जार्ज नाथूलाल बनाम म.प्र. राज्य, गुजरात बनाम आचार्य देवेन्द्र प्रसाद जी पाण्डेय** के वाद मे उच्चतम न्यायालय ने भी मान्यता प्रदान की।

Question 3: अपराध के विभिन्न चरण कौन–कौन से है? अपराधकारित करने में तैयारी एवं प्रयत्न के मध्य विभेद कीजिए।

Answer :– अपराध विधि द्वारा दण्डनीय कार्य है क्योंकि यह अधिनियम द्वारा निषिद्ध है या लोकहित के लिये हानिकारक है।' यह परिभाषा बहुत विस्तृत है, क्योंकि ऐसी कोई भी चीज जो लोकहित के लिये हानिकारक है अपराध हो सकती है। आधुनिक जटिल समाज में बहुत सी ऐसी चीजें हैं जो लोकहित के लिये हानिकारक कहीं जा सकती हैं।

अपराध करने का आशय मात्र दण्डनीय नहीं होता है किसी व्यक्ति का यदि केवल अपराध करने का आशय मात्र हैं और उस आशय के लिए कोई भी काम नहीं किया जाता हैं तो बिना कार्य किये अकेले आशय को अपराध विधि के अर्न्तगत दण्डनीय नहीं माना गया हैं। क्यों कि अकेला आशय किसी भी अपराध का सृजन नहीं करता।

अपराध के चरण– प्रत्येक अपराध करने की चार अवस्थायें हैं। ये चार अवस्थायें निम्नलिखित हैं–

1. आशय
2. तैयारी
3. प्रयत्न

4. अपराध की पूर्णता।

1. आशय – आशय किसी अपराध को विशेष ढंग से करने का निश्चय होता है। आशय किसी ढंग से करने का निश्चित इरादा होता है जब तक किसी कार्य का आशय ही होता है तब तक यह विधि द्वारा दण्डनीय नहीं करती परन्तु उसके आशय के साथ किया जाता है।

1. **तैयारी**– अपराध की दूसरी स्थिति तैयारी मानी जाती है तैयारी से तात्पर्य अपराध करने के लिए काम मे आने वाली सभी आवश्यक वस्तुओं व साधनों का प्रबन्ध करने से है। आशय के समान तैयारी को भी दण्डनीय नहीं बनाया गया है परन्तु कुछ विशेष परिस्थितियों में दण्डनीय है जो निम्न प्रकार है–
   1. भारत सरकार के विरूद्ध युद्ध करने के आशय से आयुध आदि संग्रह करना। **(धारा 122)**
   2. भारत सरकार के साथ शान्ति का सम्बन्ध रखने वाले राज्य में लूट पाट करना।
      (धारा 126)

   3.डकैती डालने की तैयारी करना **(धारा 399)**

3.भारतीय सिक्के तथा स्टाम्प के कूटकरण के लिए उपकरण बनाने की तैयारी करना।

(धारा 233,234,235,256 तथा 257)।

3. **प्रयत्न** – प्रयत्न अपराध करने की दिशा में उठाया गया कदम होता है। तब अपराधी अपने उददेश्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करता है परन्तु कुछ कारण वश वह अपना उददेश्य प्राप्त करने में असफल हो जाता हैं तो यह कहा जाता है कि उसने अपराध करने का प्रयत्न किया है। **नारंगराम v. राजस्थान राज्य, AIR 1979 raj 375** का मामला एक उपयुक्त उदाहरण है।
4. **अपराध की पूर्णता**– अपराध की पूर्णता में अपराधी अपने घृणित लक्ष्य को अन्ततः प्राप्त ही कर लेता हैं।

Question 4: सामान्य आशय को स्पष्ट कीजिए। निर्णित वादों की सहायता से सामान्य आशय एवं सामान्य उददेश्य के मध्य विभेद कीजिए।

Answer :– सामान्य आशय– जहॉ पर अभियुक्त स्वयं आपराधिक कार्य नहीं करता है बल्कि आपराधिक कार्य किये जाने में केवल अपना योगदान देता है तो

इसके आधार पर भी वह दोषी ठहराया जा सकता है ऐसे अपराधों के बारे में धारा 34 निम्न व्यवस्था करती है–

भारतीय दण्ड संहिता की धारा 34 के अनुसार– सामान्य आशय– जब कि कोई आपराधिक कार्य कई व्यक्तियों द्वारा अपने सबके सामान्य आशय को अग्रसर करने में किया जाता है, तब ऐसे व्यक्तियों में हर व्यक्ति उस कार्य के लिए उसी प्रकार दायित्व के अधीन है, मानों वह कार्य अकेले उसी ने किया हो।'

धारा 34 के निम्नलिखित आवश्यक तत्व हैं–

1. एक आपराधिक कार्य किया गया हो।
2. आपराधिक कार्य एक से अधिक व्यक्तियों द्वारा किया गया हो।
3. वह सबसे सामान्य आशय को अग्रसर करने में किया गया हो।

उच्चतम न्यायालय ने **पाण्डुरंग एवं अन्य v. स्टेट आफ हैदराबाद**, AIR 1955 SC 216 के मामले में अभिनिर्णीत किया कि सामान्य आशय के लिए पूर्व नियोजित योजना अर्थात् दिमागों का मिलन आवश्यक है। यह मिलन कितनी जल्दी और कभी भी हो सकता है।

सामान्य आशय (धारा 34) व सामान्य उददेश्य (धारा 149) में अन्तर

भारतीय दण्ड संहिता की धारा 34 एवं धारा 149 संयुक्त अपराधियों के सम्बन्ध में प्रावधान करती है फिर भी दोनों में निम्नलिखित अन्तर है–

1. सामान्य आशय का क्षेत्र सामान्य उददेश्य की अपेक्षा सीमित है जबकि धारा 149 तुलनात्मक रूप से धारा 34 की अपेक्षा अधिक व्यापक है।
2. धारा 34 के अन्तर्गत विधि विरूद्ध जमाव के अस्तित्व का होना आवश्यक नहीं है जब कि धारा 149 उन सभी व्यक्तियों पर लागू होती है जो किसी विधि विरूद्ध जमाव के सदस्य हैं।
3. सामान्य आशय स्वयं किसी अपराध का सृजन नहीं करता जबकि सामान्य उददेश्य एक विशिष्ट अपराध का सृजन करता है।

Question 5: ' बल्वा' प्रत्यय से आप क्या समझते है? बल्वा और दंगा के मध्य अंतर कीजिए।

Answer :– बल्वा (उपद्रव) (Riot) – भारतीय दंड संहिता, की धारा 146 के अनुसार जब कभी विधि विरूद्ध जमाव द्वारा या उसके किसी सदस्य द्वारा ऐसे जमाव के सामान्य उददेश्य को अग्रसर करने में बल या हिंसा का प्रयोग किया जाता है, तब ऐसे जमाव का हर सदस्य बल्वा करने के अपराध का दोषी होगा।

बल्वा के आवश्यक तत्व–

1. अभियुक्तों की संख्या पॉच या उससे अधिक होनी चाहिए तथा वे विधि विरूद्ध जमाव निर्मित करते हो,
2. अभियुक्तों का एक ही सामान्य उददेश्य से प्रेरित होना आवश्यक है,
3. विधि विरूद्ध जमाव द्वारा अथवा उसके किसी सदस्य द्वारा सामान्य उददेश्य के अनुसरण में बल या हिंसा का प्रयोग होना चाहिए।

बल्वा और दंगा के मध्य अंतर

दंगा–

1. दंगा का अपराध केवल सार्वजनिक स्थान पर ही किया जा सकता है।
2. दंगा दो या अधिक व्यक्तियों द्वारा किया जा सकता है।
3. दंगा के अपराध में वास्तविक रूप में लड़ाई करने वाले व्यक्ति ही उत्तर दायी होते हैं।
4. दंगा कम दण्ड से दण्डनीय अपराध है।

बल्वा–

1. बल्वा सार्वजनिक स्थान के साथ–साथ निजी स्थान पर भी किया जा सकता है।
2. बल्वे के लिये व्यक्तियों की संख्या कम से कम 5 होनी चाहिए।
3. बल्वे में सभी व्यक्ति उत्तरदायी होते हैं जो विधि–विरूद्ध जमाव के सदस्य होते हैं चाहे उन्होनें हिंसा का प्रयोग किया हो अथवा नहीं।
4. बल्वा अधिक दण्ड से दण्डनीय अपराध है।

Question 6: दुष्प्रेरण द्वारा षड़यंत्र को स्पष्ट कीजिए। दुष्प्रेरण द्वारा षड़यन्त्र आपराधिक षड़यन्त्र से किस प्रकार भिन्न है?

Answer :– भारतीय दंड संहिता की धारा 107 उन कार्यो को उल्लेखित करती है जिनसे दुष्प्रेरण होता है।

वह व्यक्ति किसी बात के किये जाने का दुष्प्रेरक करता है जो–

पहला– किसी बात के लिए किसी व्यक्ति को उकसाता है, अथवा

दूसरा– उस बात को करने के लिए किसी षड्यंत्र में एक या अधिक अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों के साथ सम्मिलित होता है, यदि उस षड्यंत्र के अनुसरण में या अवैध लोप कारिता हो जाए, अथवा

तीसरा– उस बात के किये जाने में किसी कार्य या अवैध लोप द्वारा साशय सहायता करता है।

दुष्प्रेरण तभी अपराध है जब कि दुष्प्रेरित कार्य स्वयं में अपराध होता है।

दुष्प्रेरण के ढंग– संहिता की धारा 107 दुष्प्रेरण के तीन ढंग उल्लेखित करती है–

1. किसी व्यक्ति को उकसाकर दुष्प्रेरण
2. षडयंत्र द्वारा दुष्प्रेरण
3. सहायता द्वारा दुष्प्रेरण

Question 7: आपराधिक उत्तरदायित्व की प्रतिरक्षा के रूप में आवश्यकता का विवेचना कीजिए।

Answer :– इस सम्बन्ध में धारा 81 निम्न उपबन्ध करती है–

कोई बात केवल इस कारण अपराध नहीं है कि वह यह जानते हुए की गई है कि उससे अपहानि कारिता होना संभाव्य हैं, यदि वह अपहानि कारित करने के किसी आपराधिक आशय के बिना और व्यक्ति या सम्पत्ति को अन्य अपहानि का निवारण या परिवर्जन करने के प्रयोजन से सद्भावनापूर्वक की गई हो।

स्पष्टीकरण

ऐसे मामले में तथ्य का प्रश्न है कि जिस हानि का निवारण या परिवर्जन किया जाना है, क्या वह ऐसी प्रकृति की और इतनी आसान थी कि वह कार्य, जिससे वह जानते हुए कि उससे अपहानि कारिता होना संभाव्य है करने का जोखिम उठाना न्यायानुमत या माफी योग्य था।

इस प्रकार कोई कार्य जब–

1. किसी व्यक्ति या सम्पत्ति की कोई हानि दूर करने या बचाने के उददेश्य से किया गया हो,
2. सद्भावना से किया हो,
3. बिना आपराधिक आशय के किया गया हो, तो ऐसा कार्य अपराध नहीं होगा भले ही ऐसा कार्य यह जानते हुए किया गया हो कि ऐसे कार्य से कोई हानि हो सकती है। परन्तु यह तब जब कि–

1. जिस हानि को दूर किया गया है या बचाया गया है। इस प्रकृति की हो और इतनी सन्निकट हो कि यदि उस हानि को दूर न किया गया होता या बचाया न होता तो और अधिक हानि हो सकती थी, तथा
2. कार्य न्यायानुमत या माफी योग्य हो।

Question 8 **भारतीय दण्ड संहिता, 1860 के अन्तर्गत संयुक्त दायित्व से सम्बन्धित विधि की विवेचना कीजिए।**

Answer :- **भारतीय दण्ड संहिता की धारा 34 के अनुसार– सामान्य आशय–** जब कि कोई आपराधिक कार्य कई व्यक्तियों द्वारा अपने सबके सामान्य आशय को अग्रसर करने में किया जाता है, तब ऐसे व्यक्तियों में हर व्यक्ति उस कार्य के लिए उसी प्रकार दायित्व के अधीन है, मानों वह कार्य अकेले उसी ने किया हो।'

धारा 34 के निम्नलिखित आवश्यक तत्व हैं–

1. एक आपराधिक कार्य किया गया हो।
2. आपराधिक कार्य एक से अधिक व्यक्तियों द्वारा किया गया हो।
3. वह सबसे सामान्य आशय को अग्रसर करने में किया गया हो।

उदाहरण– 'क' 'ख' एवं 'ग' एक व्यक्ति **x** की हत्या करने की योजना बनाते हैं और **x** को मारने के लिए जाते हैं और **x** को मार डालते हैं तो यहॉ **x** की हत्या के लिए 'क' 'ख' एवं 'ग' संयुक्त रूप से दायीं होंगे, मृत्यु का कारण भले ही क' द्वारा पहुॅचाई गई चोट हो।

वीरेन्द्र कुमार घोष बनाम इम्परर, ए0 आई0 आर0 1945 पी0सी0 के मामले।

महबूब शाह v. इम्परर, AIR 1945 PC 118

उच्चतम न्यायालय ने **पाण्डुरंग एवं अन्य v. स्टेट आफ हैदराबाद, AIR 1955 SC 216** के मामले में अभिनिर्णीत किया कि सामान्य आशय के लिए पूर्व नियोजित योजना अर्थात् दिमागों का मिलन आवश्यक है। यह मिलन कितनी जल्दी और कभी भी हो सकता ळें

धारा 149 के अनुसार सामान्य उददेश्य– यदि विधि विरूद्ध जमाव के किसी सदस्य द्वारा उस जमाव के सामान्य उददेश्य को अग्रसर करने में अपराध किया जाता है या कोई ऐसा अपराध किया जाता है, जिसका किया जाना उस जमाव के सदस्य उस उददेश्य को अग्रसर करने में सम्भाव्य जानते थे तो हर व्यक्ति, जो अपराध के किये जाने के समय उस जमाव के सदस्य हैं उस अपराध का दोषी होगा।'

जसवंत सिंह बनाम हरियाणा राज्य, 2000 3 एस0सी0सी0436 के वाद में।

Question 9:- **कोई कार्य करने पर व्यक्ति तब तक दोषी नहीं होता, जब तक उसका आशय भी उसी प्रकार का न हों। भारतीय दण्ड संहिता के सुसंगत उपबन्धों की सहायता से टिप्पणी लिखिए।**

Answer :- **"Actus non facit reum nisi mens sit rea"**

(An act is not a crime unles it is committed with a particular criminal intention mens rea) पर आधारित है जिसका अर्थ होता है कि कोई कार्य तब तक अपराध नहीं होता जब तक वह उस आपराधिक आशय से न किया गया हो।

विशप ने अपनी पुस्तक क्रिमिनल ला में दुराशय के चाहे कार्य छोटा हो या बड़ा अपराध नहीं हो सकता। भारतीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्टेट आफ महाराष्ट्र v. मेयर हंस जार्ज, AIR 1965 SC 722-731 के वाद में दुराशय के बारे में यह अभिव्यक्त किया है कि केवल दुराशय अपराध नहीं हो जाता जब तक कि कोई कार्य न किया गया हो।

भारतीय दण्ड संहिता में अपराधि मनःस्थिति अपराध का आवश्यक तत्व है। **शेराज बनाम डी. रूटजेन के वाद में न्यायाधीश राइट** ने निर्णीत किया कि प्रत्येंक अधिनियम में मनः स्थिति अन्तर्निहित है जब तक कि इसके प्रतिकूल न सिद्ध कर दिया जाय। वाद में इस मत को **महाराष्ट्र बनाम एम.एच. जार्ज, नाथूलाल बनाम म.प्र. राज्य, गुजरात बनाम आचार्य देवेन्द्र प्रसाद जी पाण्डेय** के वाद उच्चतम न्यायालय ने भी मान्यता प्रदान की।

समय के साथ कानूनों में परिवर्तन होता रहता है। नए –नए कार्य अपराध घोषित होते रहते हैं इसलिए दुराशय या आपराधिक आशय का अर्थ भी कानूनों के साथ परिवर्तित होता रहता है क्योकि जब तक किसी कार्य को करना अपराध नहीं होता तब तक उसके बारे में दुराशय की कल्पना नहीं की जा सकती । इसी कारण से विधि शास्त्री दुराशय की निश्चित परिभाषा देने में असफल रहे है जैसा कि स्टीफेन का मत है कि शब्द दुराशय विभिन्न अर्थो वाला है अर्थात् इसका कोई एक अर्थ हो ही नहीं सकता ।